# भारतीय वाङ्मय

**हिन्दी तथा अहिन्दीभाषी क्षेत्रों के साहित्यिक-सांस्कृतिक समाचारों की मासिक पत्रिका**

**वर्ष** 3 **अगस्त** 2002 **अंक** 8

## स्पीकर और लेफ्टिस्ट

1945 में सेण्ट एण्ड्रुज कालेज, गोरखपुर में आयोजित कवि सम्मेलन में पं० माखनलाल चतुर्वेदी, सुभद्राकुमारी चौहान, सुमित्राकुमारी सिन्हा, धर्मवीर भारती, जगदीश गुप्त, गोपीकृष्ण गोपेश, शम्भुनाथ सिंह आदि अनेक कवि पधारे थे।

मैं इण्टरमीडिएट का छात्र था। श्री राजनाथ पांडेयजी हमारे हिन्दी अध्यापक थे। उन्होंने कवियों के आतिथ्य का दायित्व मुझे सौंपा था। उस कवि सम्मेलन ने मुझे साहित्यकारों के निकट ला दिया था। धर्मवीर भारती, जगदीश गुप्त, गोपीकृष्ण गोपेश से बहुत ही आत्मीयता हो गयी थी। मैं इलाहाबाद जाता तो, इनमें से किसी के यहाँ ठहरता।

एक बार धर्मवीर भारती के अतरसुईया स्थित मकान में नीचे के बाहरी कमरे में ठहरा था। खिड़की खुली हुई थी। एक कांस्टेबुल ने आवाज दी—''भारतीजी यहीं रहते हैं।''

दरवाजा खोलकर मैंने कहा—''हाँ! क्या बात है?''

''उन्हें बुलाइये कुछ काम है।''

मैंने भारती को आवाज दी वे ऊपर से आये।

''आप धर्मवीर भारती हैं।''

''हाँ!''

''यूनिवर्सिटी में आप स्वीकर हैं?''

''स्पीकर तो असेम्बली में होते हैं, मैं लेक्चरर हूँ।''

''जी, जी। आप गोपीकृष्ण गोपेश को जानते हैं?''

''क्या उसने कहीं कोई चोरी-डकैती की है?''

''नहीं, नहीं'' कांस्टेबुल ने एक पोस्टकार्ड निकाला और भारती को दिखाते हुए कहा—''यह कार्ड आपने लिखा है।''

''हाँ! क्या बात है?''

''गोपेशजी लेफ्टिस्ट हैं।''

''वह साला कब से लेफ्टिस्ट हो गया। वह पक्का कैपिटलिस्ट है।''

''आपने पत्र में लिखा है वह लेफ्टिस्ट हो गया है।''

भारतीजी ने पत्र पढ़कर सुनाया—

''गोपेश को मित्रों ने छोड़ दिया है, वह लेफ्टिस्ट हो गया है।''

इसे पढ़कर हम सभी खूब हँसे। कांस्टेबुल महोदय ने माफी माँगते हुए कहा—''साहब दिल्ली से जाँच आई है। इसलिए आना पड़ा।''

गोपेशजी ने बी०बी०सी० में प्रोग्राम सहायक के लिए आवेदन दिया था। दिल्ली से उसकी जाँच आई थी।

**— पुरुषोत्तमदास मोदी**

## हिन्दी के शोध ग्रंथ : दशा और दिशा

आज हिन्दी के शोध ग्रंथों की बड़ी चर्चा है। शोध ग्रंथों के स्तर, उनके निर्देशन, परीक्षण सभी पर प्रश्नचिन्ह लग गये हैं।

डॉ० पीताम्बरदत्त बडथ्वाल हिन्दी के प्रथम शोधकर्ता थे। 1928 में काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में हिन्दी एम०ए० के प्रथम बैच में सर्वोच्च स्थान प्राप्त किया। उनका शोध ग्रंथ था—'ट्रैडिशन्स ऑफ इण्डियन मिस्टिसिज्म बेस्ड अपॉन दि निर्गुण स्कूल ऑफ हिन्दी पोएट्री'। बाद में 'हिन्दी काव्य में निर्गुण सम्प्रदाय' शीर्षक से इसका हिन्दी अनुवाद हुआ। यह शोध ग्रन्थ आज तक अपनी विशिष्टता बनाये हुए है। इसके बाद हिन्दी में हजारों शोध हुए किन्तु उनमें से आज कितने शोध ग्रंथ याद किये जाते हैं—मुश्किल से सौ के लगभग, जिनकी शोध ग्रंथ से परे उस विषय पर लिखे गये मौलिक ग्रंथ के रूप में उनकी पहचान है, जो सागर के समान है, जिनसे ग्रहण कर उन्हीं विषयों पर हजारों शोध ग्रंथ लिखे गये और उनमें से अनेक प्रकाशित भी हुए।

किन्तु आज शोध ग्रंथों की क्या दशा है, एक ही विषय पर शब्दों और अध्यायों के हेर फेर से नये शोधग्रंथ तैयार हो जाते हैं और नौकरी प्राप्त करने या पदोन्नति के लिए उन्हें अपने व्यय से प्रकाशित भी कर लेते हैं। इस प्रकार के शोध ग्रंथों के खोखलेपन को अनुभव कर विश्वविद्यालय अनुदान आयोग ने अध्यापक बनने के लिए नेट/सेट की परीक्षा अनिवार्य कर दी और इस प्रकार शोध ग्रंथों की महत्ता समाप्तप्राय हो गई।

शोधग्रंथ शोधकर्ता के लिए जितने महत्त्व के हैं उससे अधिक शोध निदेशक के लिए भी प्रतिष्ठापरक और पदोन्नति के माध्यम हैं कि अमुक प्राध्यापक ने इतने शोध कराये। शोधकर्ता और निदेशक इस प्रतियोगिता में अपना-अपना हित देखते हैं। मनचाहे परीक्षक नियुक्त करवा लेते हैं। कभी-कभी परीक्षक की नियुक्ति को लेकर कुलपति से टकराव हो जाता है। कितने तथाकथित शोध ग्रंथ दूसरों ने पैसे लेकर लिखे। शोधकर्ता का उस विषय से कोई सम्बन्ध नहीं। मौखिकी लेने परीक्षक आये, निदेशक के निर्देशानुसार परीक्षक महोदय की भरपूर खातिरदारी, सेवा और उपहार, बस डॉक्टर हो गये। एक यूनिवर्सिटी के प्रोफेसर महोदय ने एक छात्रा की डी०लिट्० की थीसिस लिखी, लगभग 50 हजार रुपये उससे लिए और स्वयं उसके परीक्षक बन गये। ऐसे कितने ही उदाहरण प्रत्यक्ष हैं।

यह उल्लेखनीय है कि पिछले दिन काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के कुलपति ने विगत दस वर्षों के शोध ग्रंथ तलब कर लिए हैं।

क्यों न हिन्दी में शोध ग्रंथों का लेखन बिलकुल बंद कर दिया जाय। नौकरी प्राप्त करने के लिए इसकी उपयोगिता समाप्त हो गई है।

अब यही उचित है कि अध्यापन शुरू करने के बाद नये सिरे से किसी नये विषय का मौलिक रूप से अध्ययन कर निबन्ध या पुस्तक लिखें। ऐसे विषय चुनें जो मौलिक हों। आज हिन्दी में संदर्भ ग्रंथों का अभाव है। लगभग पचास वर्ष पूर्व 'हिन्दी साहित्य कोश' दो भागों में प्रकाशित हुए थे। डॉ० धीरेन्द्र वर्मा तथा उनके सहयोगियों ने उनका संपादन किया था। आज वे अपूर्ण और असामयिक हैं, इसी प्रकार के अनेक संदर्भ ग्रंथ हैं जिनका दायित्व एक या अनेक विश्वविद्यालय संयुक्त रूप से विषय का चयन कर सकते हैं, जो हिन्दी की निधि बनेंगे। आयोग तथा सरकार दोनों से उन्हें सहायता प्राप्त हो सकती है।

क्या इस दिशा में हिन्दी के विद्वान प्राध्यापक विचार करेंगे।

**—पुरुषोत्तमदास मोदी**

# स्मृति-शेष

### स्व. कृष्णचन्द्र बेरी
### एक स्मरणीय व्यक्तित्व

**कृष्णचन्द्र बेरी** एक कर्मठ जीवन की कहानी है।

बेरीजी का जन्म १० मार्च १९२० को काशी में नीलकण्ठ मुहल्ले में ननिहाल में हुआ। बेरीजी की प्रारम्भिक शिक्षा विश्वनाथ मन्दिर के सामने सनातन धर्म विद्यालय में शुरू हुई। वास्तविक शिक्षा कलकत्ता में ही हुई। कलकत्ता में छात्र आन्दोलन में सक्रिय भाग लिया। उन्हीं दिनों प्रमुख नेताओं तथा साहित्यकारों से बेरीजी का सम्पर्क हुआ। कलकत्ता में स्काटिश चर्च कालेज में प्रवेश लिया किन्तु चार आने की धोती, छः पैसे की कमीज, दो पैसे की बंडी, चार आने की नेहरू जाकेट और एक पैसे की गाँधी टोपी पहनने वाले की वहाँ गति कहाँ थी। विद्यासागर कालेज के रात्रि सत्र में पढ़ने लगे और सुबह-शाम दुकान का भी काम देखते थे।

छात्र जीवन के १६ वर्ष की अवस्था में ही आपने बंगाल, असम, बिहार ही नहीं बर्मा, सिंगापुर, मलाया तक पुस्तकें बेचने निकल जाते थे।

१९३५ में कलकत्ते में हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय के नाम से पुस्तक प्रकाशन का कार्य आरम्भ किया। इसके पूर्व निहालचंद एण्ड कम्पनी के नाम से पुस्तक प्रकाशन और विक्रय करते थे।

द्वितीय महायुद्ध में कलकत्ते में युद्ध की आशंका से १९३९ में बनारस आ गये। रामघाट में पाँच तल्ले का मकान पाँच हजार रुपये में खरीद कर वहीं रहने लगे। मान-मंदिर में पुस्तक प्रकाशन का कार्य करते थे, ज्ञानवापी पर दूकान भी उसी समय ली।

वाराणसी में हिन्दी पुस्तकों का कोई प्रमुख प्रकाशक नहीं था। उसी समय हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय ने बनारस में प्रकाशन कार्य प्रारम्भ किया। इससे बनारस के ही लेखकों की नहीं देश के प्रमुख हिन्दी लेखकों की पुस्तकें प्रकाशित की जो दुर्लभ हो चुकी हैं। कलकत्ता में बेरीजी को अनुभव हुआ कि बंगला में पुस्तकों के सस्ते संस्करण पाठक खूब खरीदते हैं, इससे प्रेरित होकर बेरीजी ने अत्यन्त अल्प मूल्य में प्रमुख लेखकों की समग्र रचनावली बहुत ही सस्ते मूल्य में प्रकाशित कीं। इससे हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय की ख्याति बढ़ी। बेरीजी के कारण काशी के कितने प्रेसवालों, बाइण्डरों की रोजी-रोटी चली। उनके विशाल प्रकाशन कार्य व्यापार से प्रकाशन के विभिन्न घटकों का विकास हुआ।

बेरीजी का राष्ट्रीय, साहित्यिक तथा सामाजिक जीवन बहुमुखी था। मृदुभाषी, ओजस्वी वक्ता, सहृदय तथा उदार उनका व्यक्तित्व सदैव याद आता रहेगा। उन्हें हिन्दी प्रकाशन जगत का भीष्म पितामह कहा जाय तो अतिशयोक्ति नहीं होगी। उनके प्रति विनम्र श्रद्धांजलि।

— **पुरुषोत्तमदास मोदी**

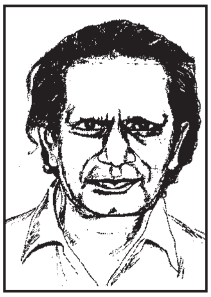

### 'हंस अकेला' चला गया

'हंस अकेला' का गायक कविवर **रमानाथ अवस्थी** का 29 जून को निधन हो गया। वह कह गया था—

एक दिन होगा, हम नहीं होंगे,
आप चाहेंगे, हम न आएँगे।

और उसकी ही वाणी में होनहार हो ही गया—

साँस का ठिकाना क्या, आए न आए
यह बात कौन किसे कैसे समझाए,
कुछ भी करो होनहार होगा जरूर
रोको मत, जाने दो, जाना है दूर

आखिर कौन रोक सका उस यात्री को। उसके ही शब्दों में विनम्र श्रद्धांजलि।

### पूर्व शिक्षा मंत्री रामनगीना सिंह नहीं रहे

उत्तर प्रदेश के पूर्व शिक्षा मंत्री एवं पूर्व लोकसभा सदस्य **रामनगीना सिंह** का 13 जून को निधन हो गया। वे 86 वर्ष के थे। लकवे की शिकायत पर उन्हें लगभग 15 दिन पूर्व अस्पताल में भर्ती कराया गया था। इलाज के दौरान उनकी हालत बिगड़ती गयी और मस्तिष्क शिरा फटने से शाम उन्होंने अन्तिम साँस ली।

राजनीति से संन्यास लेकर उन्होंने पौराणिक विषयों का गहन अध्ययन किया था। उनकी पुस्तकें हैं—अयोध्या का राजवंश, रावण की सत्यकथा, अविनाशी गौतम बुद्ध, कथा त्रिदेव की। उनके निधन से निष्ठावान कार्यकर्ता और विचारक का अभाव अनुभव होता रहेगा।

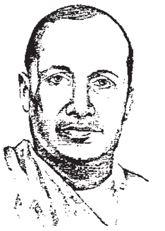

### नवीन परम्पराओं के सृजनकर्ता जयशङ्कर 'प्रसाद'

''प्रसादजी बहुमुखी प्रतिभा के धनी कलाकार थे। वे नई परम्पराओं के निर्माता थे। वे सदैव परम्पराओं के जीवंत रूप को ग्रहण करते थे।''

'जयशङ्कर प्रसाद संस्कृति वातायन' के तत्त्वावधान में महात्मा गाँधी काशी विद्यापीठ के कुलपति प्रो० रामजनम सिंह की अध्यक्षता में विद्यापीठ समिति कक्ष में उत्तर प्रदेश राज्यपाल के प्रमुख सचिव श्री शम्भुनाथ ने 'प्रसाद के विविध आयाम' पर वार्ता प्रस्तुत की। ''काव्य की मान्य परम्परा के लीक से हटकर उन्होंने अपने महाकाव्य 'कामायनी' का प्रारम्भ स्तवन से नहीं किया, बल्कि उसकी शुरुआत वे सीधे तौर से ''हिमगिरि के उत्तुंग शिखर पर, बैठ शिला की शीतल छाँह; एक पुरुष, भींगे नयनों से, देख रहा था प्रबल प्रवाह''।

''प्रसादजी समन्वयवादी चिन्तन धारा के कवि हैं। उन्होंने भारतीय सांस्कृतिक चेतना का अभ्युदय किया। अतिवादों के मध्यम मार्ग का उनका संदेश मौजूदा समाज के लिए सार्थक और प्रासंगिक है। प्रसादजी ने अतिवाद के विरुद्ध समन्वयवादी दृष्टि को उद्घाटित किया। 'प्रेम पथिक' के माध्यम से जहाँ उन्होंने प्रेम और सौन्दर्य के जरिये प्रकृति के विविध स्वरूपों को प्रस्तुत किया वहीं दूसरी तरफ 'आँसू' में करुणा और वेदना जनित जीवन के विविध पक्षों को उकेरा। प्रसादजी अपने काव्य के माध्यम से श्रेष्ठ कवि हैं, किन्तु 'कामायनी' महाकाव्य उन्हें श्रेष्ठतम बनाता है।

''प्रसाद की कविता में आस्था का संदेश है। कुछ आलोचकों का कहना है कि छायावाद 'रोमैण्टिक अवसाद' की कविता है। प्रसाद ने इस धारणा का निर्मूल साबित किया। उनकी कविता में पलायनवाद नहीं है। वह सुख और दुःख दोनों में जीवन जीने का संदेश देती है।''

अपने एक घण्टे के भाषण में शम्भुनाथजी ने प्रसाद काव्य के विविध आयाम के संदर्भ में उनकी प्रमुख कविताओं की रसमय व्याख्या की। सभा में काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, विद्यापीठ के प्रमुख अध्येता तथा साहित्यकार उपस्थित थे। अन्त में अध्यक्षीय भाषण में प्रो० रामजनम सिंह ने प्रसाद काव्य की प्रासंगिकता बताते हुए कहा कि प्रसाद के समन्वयवादी दर्शन से प्रेरणा लेने की जरूरत है। प्रारम्भ में प्रो० रामकुँवर राय ने विषय प्रवर्तन किया।

संचालन डॉ० सुरेन्द्र प्रताप ने किया, स्वागत तथा धन्यवाद वातायन के उपाध्यक्ष पुरुषोत्तमदास मोदी ने किया।

# पुरस्कार-सम्मान

## मुरलीधर पांडेय को विश्वभारती सम्मान

संस्कृत के प्रख्यात विद्वान वाराणसी के आचार्य **मुरलीधर पांडेय** को वर्ष 2000 के लिए **विश्वभारती सम्मान** प्रदान किया गया है। इसके अलावा वाराणसी के ही पंडित विश्वनाथ शास्त्री दातार, आचार्य श्रीराम पांडेय व स्वामी द्वारिकादास शास्त्री, इलाहाबाद के हरिशंकर त्रिपाठी व देवरिया के आचार्य रामनारायण मिश्र को विशिष्ट सम्मान दिया जाएगा।

पुरस्कार के रूप में 25–25 हजार रुपये दिए जाएँगे। विशेष पुरस्कार 11–11 हजार रुपये के और विविध पुरस्कार 5–5 हजार रुपये के होंगे। नामित पुरस्कारों में सीतापुर के डॉ० गिरिजाशंकर मिश्र को उनकी पुस्तक 'प्रसन्नभारतम् महाकाव्यम्' के लिए 'कालिदास सम्मान' दिल्ली की प्रोफेसर सुषमा कुलश्रेष्ठ को 'अमृत–निर्झरीयासृष्टि: स्रष्टुराषा' के लिए 'वाणभट्ट सम्मान', वाराणसी की डॉ० उमादेवी जोशी को 'सांख्यदर्शन की परम्परा में मुनित्रय' के लिए 'शंकर सम्मान', लखनऊ के आचार्य रामनारायण त्रिपाठी को 'शशिकला' के लिए 'व्यास सम्मान', वाराणसी के जयशंकरलाल त्रिपाठी को 'काशिका' के लिए 'पाणिन–सायण सम्मान' देने की घोषणा की गई है। वाराणसी के डॉ० कुंजबिहारी शर्मा, पूरनचंद्र जोशी, श्री निवास शास्त्री, धर्मराज पांडे, रविशंकर शर्मा, डॉ० महेन्द्र पांडेय, इलाहाबाद के डॉ० देवेन्द्र व बुलंदशहर के रामनाथ शर्मा को 'शुक्लयजुर्वेद माध्यन्दिन शाखा' तथा एन०एस० व्यंकटेश ताताचार्य व देव मिश्रा को 'तैतरीय शाखा' में वेद पंडित पुरस्कार प्रदान किया जाएगा। वाराणसी के डॉ० राधेश्याम चतुर्वेदी, प्रोफेसर सुदर्शनलाल जैन, लखनऊ के डॉ० बटोही झा, तिरुपति के डॉ० गुल्लापल्लि श्री रामकृष्णमूर्ति, मुरादाबाद के रामानन्द शर्मा, इलाहाबाद के डॉ० जयंत श्याम ब्रह्मचारी को विशेष पुरस्कार दिए जाएँगे। बलिया की डॉ० सुद्युम्मनाचार्य, लखनऊ की वाणापाणि पाटिनी, डॉ० लोकमान्य तिलक, डॉ० प्रयागनारायण मिश्र, डॉ० विद्याविंदु सिंह, आचार्य भास्करानंद लोहनी, डॉ० उमा पांडेय, इलाहाबाद के डॉ० शिवशंकर त्रिपाठी, डॉ० उमेशदत्त भट्ट, वाराणसी के डॉ० चंद्रमौलि द्विवेदी, डॉ० व्यास मिश्र, प्रो० पारसनाथ द्विवेदी व डॉ० रामेश्वरी कुमारी तथा दिल्ली के डॉ० जगदीश सहाय को विविध पुरस्कारों की श्रेणी में सम्मानित किया गया है।

## राजेन्द्र माथुर स्मृति फैलोशिप

हिन्दी के युवा पत्रकार **उर्मिलेश** को देश के प्रतिष्ठित राजेन्द्र माथुर स्मृति पत्रकारिता फैलो पुरस्कार के लिए चुना गया है। इसके तहत उन्हें एक लाख रुपये की राशि दी जाएगी। फेलोशिप पुरस्कार योजना के तहत श्री उर्मिलेश राजनैतिक नेतृत्व और लोकतांत्रिक प्रक्रिया के संकट के संदर्भ में कश्मीर घाटी में अलगाववाद का अध्ययन विषय पर अपनी शोध रिपोर्ट पेश करेंगे।

## भरत झुनझुनवाला को पाञ्चजन्य नचिकेता सम्मान

जाने–माने स्वदेशी आर्थिक पत्रकार **डॉ० भरत झुनझुनवाला** को प्रधानमंत्री अटलबिहारी वाजपेयी ने पाञ्चजन्य नचिकेता सम्मान से सम्मानित किया। प्रधानमंत्री निवास पर एक समारोह में डॉक्टर झुनझुनवाला को सम्मान के रूप में एक लाख रुपये नकद, शाल और प्रशस्तिपत्र भेंट किया गया।

## एक लाख रुपये का हिन्दी पुरस्कार

हैदराबाद की संस्थान 'दक्षिण भारत हिन्दी प्रतिष्ठान' ने इस वर्ष (2002 ई०) दक्षिण भारतीय भाषा–भाषी एक वरिष्ठ एवं बहुमुशी प्रतिभा सम्पन्न हिन्दी साहित्यकार को उनकी दीर्घकालीन साहित्य साधना को दृष्टि में रखकर एक लाख रुपये का विशेष पुरस्कार देने का निश्चय किया है। पुरस्कार योग्य साहित्यकार का चयन प्रतिष्ठान द्वारा गठित एक तदर्थ समिति करेगी।

उल्लेखनीय है कि प्रतिष्ठान पिछले कई वर्षों से दक्षिण भाषा–भाषी हिन्दी साहित्यकारों को पुरस्कृत करता रहा।

## गणेश शंकर विद्यार्थी पत्रकारिता पुरस्कार

**श्री शिवकुमार गोयल** को गणेश शंकर विद्यार्थी पत्रकारिता पुरस्कार से सम्मानित किया जायेगा। आपको ये पुरस्कार हिन्दी दिवस पर 14 सितम्बर 2002 को भारत के महामहिम राष्ट्रपति के द्वारा प्रदान किये जायेंगे।

◆ ◆

माधवराव सप्रे स्मृति समाचार पत्र संग्रहालय, भोपाल के स्थापना दिवस 16 जून 2002 के अवसर पर **श्री हरिकृष्ण त्रिपाठी** को 'लाल बलदेवसिंह सम्मान', **श्री उमेश त्रिवेदी** को 'माखनलाल चतुर्वेदी पुरस्कार', **श्री राकेश पाठक** को 'जगदीशप्रसाद चतुर्वेदी पुरस्कार', **सुश्री जूही वर्मा** को 'झाबरमल्ल शर्मा पुरस्कार' एवं पत्रिका **'स्नेह'** को 'रामेश्वर गुरू पुरस्कार' से अलंकृत किया गया।

## बाबू गुलाबराय एवं पंडित सूर्यनारायण व्यास स्मारक डाक टिकट का लोकार्पण

प्रधानमंत्री श्री अटलबिहारी वाजपेयी ने बाबू गुलाब राय एवं पंडित सूर्यनारायण व्यास स्मारक डाक टिकट का लोकार्पण किया।

इस अवसर पर प्रधानमंत्री ने कहा—"आज के कार्यमक्रम में भाग लेते हुए मुझे बड़ी प्रसन्नता हो रही है। डाक विभाग को धन्यवाद देता हूँ, उसने राजनीति से नजर हटाकर साहित्यकारों का, संस्कृति के ज्ञाताओं का, पाठकों का सम्मान करने का सही कदम उठाया है। आज राजनीति को कोसने के बजाय उसको परिमार्जित करने का प्रयास किया जाना चाहिए। यदि राजनीति के साथ संस्कृति का समन्वय होगा, मूल्यों के साथ राजनीति जुड़ेगी, आदर्शों से अनुप्राणित होगी तो राजनीति जनकल्याण के अपने उद्देश्य को पूरा करने में अवश्य सफल होगी।"

गुलाबराय जी के लेखन, उनकी समालोचना, उनकी दूरदृष्टि और हम उस समय को याद रखें।

पं० सूर्यनारायण व्यास ने बहुत सी संस्थाओं का निर्माण किया। वे स्वयं में एक संस्था थे। उनकी संस्थाएँ आज भी उनके नाम की कीर्ति पताका फहराती हुई अपना असर डाल रही हैं।

शिवमंगल सिंह 'सुमन' जी के शब्दों में व्यासजी को श्रद्धांजलि अर्पित करना चाहता हूँ—यह ऋषि महर्षि की वंश परम्परा में शिक्षा, कला, व्याकरण, साहित्य, ज्योतिष आदि सभी अनुभवों को चरितार्थ करता हुआ ज्ञात परम्परा से ज्ञान प्राचीन उद्भावों का घोष कर रहा हो। धर्म से यश और कांड की सिद्धि सम्भव है।

## उत्तर प्रदेश संस्कृत संस्थान

नया हैदराबाद, लखनऊ–226 007
के आगामी पुरस्कार
31 अगस्त 2002 तक प्रविष्टियाँ आमंत्रित

### विश्वभारती तथा विशिष्ट पुरस्कार

1. **विश्वभारती पुरस्कार** – (1) रु० 151,000/–
2. **विशिष्ट पुरस्कार** – (5) रु० 51,000/–
3. **नामित पुरस्कार** – (5) रु० 25,000/–
   (क) कालिदास पुरस्कार, (ख) बाणभट्ट पुरस्कार, शंकर पुरस्कार, (ग) शंकर पुरस्कार, (घ) व्यास पुरस्कार, (ङ) पाणिनी/सायण पुरस्कार।
4. **वेद पंडित पुरस्कार** – (10) रु० 25,000/–
5. **विशेष पुरस्कार** – (6) रु० 11,000/–
6. **विविध पुरस्कार** – (20) रु० 5,000/–
   (क) साहित्य पुरस्कार (10), (ख) शास्त्र पुरस्कार (6), (ग) बाल साहित्य पुरस्कार (2), (घ) श्रमण पुरस्कार (दो)।

## स्मृति पुरस्कार

स्व० अम्बिकाप्रसाद दिव्य की स्मृति में, साहित्य सदन, सागर (म०प्र०) द्वारा वर्ष 2003 के लिए तीन अम्बिकाप्रसाद दिव्य प्रतिष्ठ पुरस्कार प्रदान किये जायेंगे। उपन्यास और कहानी विधा की श्रेष्ठ पुस्तकों के लिये पाँच हजार रुपये राशि का, काव्य विधा की श्रेष्ठ पुस्तकों हेतु दो हजार एक सौ रुपये का तथा नाटक व्यंग्य एवं ललित निबन्ध विधाओं के लिये दो हजार रुपये राशि का एक पुरस्कार प्रदान किया जायेगा। इन पुरस्कारों हेतु जनवरी 200 से दिसम्बर 2002 के बीच प्रकाशित पुस्तकों की तीन–तीन प्रतियाँ, लेखक के दो रंगीन चित्र और सौ रुपये प्रवेश शुल्क, 30 दिसम्बर 2002 तक **साहित्य सदन,** द्वारा श्रीमती राजो किंजल्क, सी–5, रेडियो कालोनी, सिविल लाइन्स, सागर–47001 (म०प्र०) के पते पर भेजना होगा।

# विचार सरणी

## कविता कभी मर नहीं सकती

विज्ञान की आशंका जनित सम्भावनाओं के चलते आज कविता भी आशंकाओं से घिरी हुई है, लेकिन इन सबके बावजूद कविता कभी मर नहीं सकती क्योंकि कविता मनुष्य को आपस में जोड़ती है।

कविता के भविष्य की चिन्ता मनुष्य के भविष्य के साथ जुड़ी हुई है। आज केवल कविता के भविष्य पर ही प्रश्नचिन्ह नहीं है बल्कि मनुष्य के भविष्य पर भी प्रश्नचिन्ह लगा हुआ है।

— **विष्णुकांत शास्त्री**

## पुस्तक और पाठक

कोर्स की किताबों तक ही सीमित आज के विद्यार्थी और कैरियर ओरियेंटेड किताबों के साथ प्रतियोगी परीक्षाओं की दौड़ में बेतहाशा भागते लोगों को साहित्य की पुस्तकें पढ़ने की फुर्सत ही नहीं है। घर बैठे टीवी से मनोरंजन सुख प्राप्त करना सरल हो गया और इण्टरनेट के जरिये पूरी दुनिया कम्प्यूटर के माउस में समाहित हो गयी। ऐसे में मुंशी प्रेमचंद को 'नमक का दरोगा' के साथ एक कोने में बैठा दिया गया। भारतेन्दु बाबू की 'अंधेर नगरी' मात्र रंगमंच तक ही सीमित होकर रह गयी। बंकिम, शरत और रवीन्द्रनाथ को भी सीरियल और समाचारों में समेट दिया गया। — **सुरोजीत चैटर्जी**

## हिन्दी का पाठक

हिन्दी प्रदेश में अंग्रेजी माध्यम के बाद जो बचता है वह हिन्दी की मलिन बस्ती है जहाँ संवेदनाएँ हैं लेकिन ज्ञान नहीं है। जहाँ अनुभव हैं लेकिन उनके विश्लेषण की बड़ी प्रविधियाँ नहीं हैं। तो इस तरह एक विकलांग और एकायामी पठनाभिरुचि बन पाती है, अगर बनती है तो।

हिन्दी में पाठक निर्माण की प्रक्रिया इसीलिए अधूरी रही है। उसमें संवेदना और ज्ञान के बीच व्याघात रहा है। हिन्दी जाति के बारे में विचार करते हुए यह नहीं भूलना चाहिए कि वह अधूरी स्वतंत्रताओं, अधूरी शिक्षा, अधूरे जागरण की पैदावार है। तो कारण कई हैं जो इस हिन्दी उजाड़ का निर्माण करते हैं।

वाल्तेयर का वो कथन शायद आपमें से कुछ को याद हो कि लोग जैसे होते हैं उन्हें वैसी ही सरकार मिलती है। इस तर्ज पर यह कहने का मन हो रहा है कि जनता अपने लेखक निर्माण करती है। लेकिन हिन्दी बोलने वाले लोगों में ऐसी कोई उन्मादमय ललक दिखती नहीं। जो न पढ़े वो क्या गढ़े-अगर ऐसी किसी कहावत को गढ़ा जाए तो पता लगेगा हिन्दी समाज की बौद्धिक दुर्दशा ने उसे वैचारिक रूप से अनुर्वर इलाके में बदल दिया है। तो इस तरह हिन्दी समाज का एक नॉन-थिंकिंग चरित्र बनता है। न सोचता समाज। यह एक सहता हुआ समाज है। यह न पढ़ता हुआ समाज है। इसीलिए हिन्दी में समाज में कोई वैचारिक व्यूह बनता नहीं नजर आता। जिस समाज में किताब की माँग नहीं होगी, उसमें अर्द्ध लेखक और लगभग-लेखक होंगे, स्वतंत्र लेखक नहीं ही होंगे। और स्वतंत्र लेखन की संस्कृति नहीं है तो विरोध, विचार, अंत:करण, उपन्यास का आत्महंता अभाव हिन्दी में रोज दिखता है।

हाल में जो सर्वेक्षण आया है, उसमें अखबारों के हिन्दी पाठकों की संख्या में उत्साहजनक बढ़ोत्तरियों के ब्यौरे हैं। खुशी की बात है। लेकिन अखबार पढ़ने की ललक किताब पढ़ने की इच्छा से भिन्न है। यह खबर स्वतंत्र लेखक के डिप्रेशन को कम नहीं कर पाएगी। दरअसल, इस सर्वे ने इस ओर इशारा करना शुरू कर दिया है कि हिन्दी जाति फौरी सूचनाओं और समाज-राजनीति पर फौरी टिप्पणियों से अपना काम चला लेगी। आदर्श स्थिति यह होती कि अखबार और उनके पाठकों की संख्या में बढ़ोत्तरी का अनुपात वैचारिक, संज्ञानात्मक साहित्य के रचे जाने और पढ़े जाने के फैलाव के कमोबेश बराबर होता। यदि लगता नहीं कि ऐसा है तो यह इस ओर इशारा है कि हिन्दी जाति का वैचारिक आलस्य बरकरार है। यह अखबार को देखने वाली जाति है, किताब पढ़ने वाली नहीं। उसके सामूहिक आत्मन में स्वतंत्र लेखक को पैदा करने का एजेंडा फिलहाल नहीं है। लेकिन हिन्दी में अखबार और फिल्म देखने वालों, किताबें पढ़ने का कोई विकल्प नहीं। पानी का विकल्प खाना नहीं होता। — **देवीप्रसाद मिश्र**

## आलोचक की भूमिका

रचना सम्पूर्ण समाज की संस्कृति का ताना-बाना होती है। आज आलोचना सांस्कृतिक अध्ययन हो गई है। सहमति तथा असहमति के द्वंद्व के बीच आलोचना का विकास होता है। आलोचना एक संवाद है जिसकी पहली शर्त यह होती है कि आलोचक को स्वयं पहल करना होता है। उसे सरपंच की भूमिका त्यागनी होगी।

आलोचक वर्तमान तथा अतीत की कृतियों पर अपनी संवेदना व्यक्त करता है। साथ ही अन्य लोगों की राय जानने का प्रयास करता है। आलोचना शास्त्र तथा पद्धति नहीं है बल्कि यह मूल्य निर्धारण की प्रक्रिया है। शास्त्र केवल लक्षण गिना सकता है लेकिन यह नहीं बता सकता कि लक्षण उत्तम है अथवा नहीं। वह लक्षण की वेदना नहीं बता सकता।

## बीएचयू हिन्दी साहित्य का 'कैंब्रिज'

बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय हिन्दी साहित्य के लिए 'कैंब्रिज विश्वविद्यालय' के समान है क्योंकि यहाँ से तीन आलोचक पैदा हुए। आचार्य रामचंद्र शुक्ल, आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी तथा आचार्य वाजपेयी यहीं की उपज हैं। यहाँ से पैदा होने वाला चौथा आलोचक कौन (स्वयं तो नहीं?) होगा इसका निर्णय इतिहास करेगा। इलाहाबाद विश्वविद्यालय 'आक्सफोर्ड विश्वविद्यालय' है। इस विश्वविद्यालय ने आईएएस अफसरों की फौज तैयार की, रचनाकार भी पैदा किए लेकिन आलोचक पैदा नहीं किए। काशी में आलोचना इसलिए पुष्पित पल्लवित हुई कि यहाँ भारतीय चिंतन की दो हजार वर्ष पुरानी परम्परा रही है। संस्कृत महाविद्यालय के पास परम्परा की थाती थी जिसके कारण आलोचना विकसित हुई।

— **नामवर सिंह**

## लुप्त होती भाषाएँ

सूचनातंत्र के विस्फोट ने सुविधाएँ चाहे जो दी हों, लेकिन इससे चंद सम्पन्न भाषाओं की तानाशाही भी कायम हो रही है। क्षेत्रीय भाषाओं, बोलियों का प्रयोग लगातार कम होता जा रहा है। वे लगभग मरती जा रही हैं। संयुक्त राष्ट्र संघ के एक अनुमान के मुताबिक अगली सदी तक विश्व की 90 प्रतिशत भाषाएँ और बोलियाँ मर सकती हैं। विश्व की 234 लोकभाषाएँ दुर्लभ भाषाओं की श्रेणी में आ चुकी हैं। 2500 से ज्यादा भाषाएँ, बोलियाँ खत्म होने के कगार पर हैं। संयुक्त राष्ट्र संघ अपने एक अध्ययन में कहता है कि भाषाओं के गायब होते ही उनके गीतों, कहानियों, हस्तकलाओं और ऐसे ही अन्य कलाओं में अन्तर्निहित प्राकृतिक रहस्य भी हमेशा के लिए गायब हो जाएँगे। आँकड़े तो यहाँ तक चेतावनी देते हैं कि इस तरह से विश्व में कई फसलों के हमेशा के लिए नष्ट हो जाने का खतरा भी बढ़ जाएगा जिनके सूत्र इनमें हैं।

भाषा का तात्पर्य केवल बोलचाल के माध्यम तक सीमित नहीं है। भाषा का मतलब है उस स्थान-विशेष की माटी की सोंधी खुशबू, जिसे बड़ी मुश्किल से गढ़ा जाता है। भाषाओं के जरिये उस सरजमीं की परम्पराएँ, गीत और लोककथाएँ हजारों पीढ़ियों का लम्बा सफर तय करती हैं और इस तरह बनती हैं भाषाओं की सुन्दर फुलवारी।

— **अरविन्द खरे**

❑ ❑ ❑

देश में अब जल्द से जल्द एक ऐसी भाषा नीति घोषित की जानी चाहिए जिसमें अंग्रेजी की अनिवार्यता समाप्त हो। अंग्रेजी के साथ-साथ हिन्दी और अन्य भारतीय भाषाओं को भी पूरा सम्मान मिलना चाहिए। सरकार को ऐसी व्यवस्था करनी चाहिए जिससे भारतीय भाषाओं के साथ भी शिक्षा के अन्तिम चरण में पहुँचा जा सके।

अंग्रेजों की थोपी शिक्षा पद्धति से देश अभी तक बाहर नहीं निकल पाया है फलस्वरूप देश में स्वाभिमान शून्य पीढ़ी का विकास हो रहा है और यह पीढ़ी भारत की गौरवमयी आध्यात्मिक और सांस्कृतिक धरोहर से कटी हुई है। अंग्रेजों ने साम्राज्यवादी उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए भारत की प्राचीन शिक्षा पद्धति में बदलाव किया था। दुर्भाग्यवश स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भी देश की बागडोर सम्भालने वालों ने इस ओर कोई ध्यान नहीं दिया और आज उसी का परिणाम है कि देश में पश्चिमी संस्कृति के दुष्परिणाम सामने आ रहे हैं।

— **सुदर्शन**

# पुस्तक समीक्षा

## कुछ अलग ढंग के प्रभावों वाला संस्मरण

## अंतरंग संस्मरणों में जयशंकर `प्रसाद'

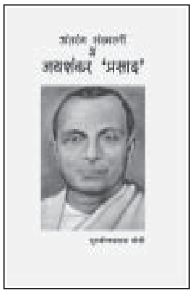

**अंतरंग संस्मरणों**
**में**
**जयशंकर `प्रसाद'**

सम्पादक
पुरुषोत्तमदास मोदी

मूल्य : 150 रुपये

हिन्दी के स्वनामधन्य साहित्यकारों के संस्मरण ग्रन्थों की शृंखला में 'अंतरंग संस्मरणों में जयशंकर प्रसाद' कुछ अलग ढंग का प्रभाव छोड़ता है। इसका कारण यह है कि इस पुस्तक के सम्पादक मोदीजी स्वयं उच्च साहित्यिक रुचि सम्पन्न, अध्ययनशील और गुणग्राही व्यक्ति हैं। प्रसादजी के प्रति उनके भीतर गहरा सम्मान भाव और भावात्मक आकर्षण रहा है। इसीलिए बहुत श्रमपूर्वक प्रसादजी के अंतरंग मित्रों से लेकर उनके समकालीन प्रख्यात साहित्यकारों तक के संस्मरणों को एकत्र कर इस कृति में सँजो दिया है। ये समस्त दुर्लभ संस्मरण बहुत प्रामाणिक तो हैं ही, गहरी आत्मीयता के साथ प्रस्तुत किये गये हैं और पहली बार हिन्दी संसार के सामने अपने समवेत प्रभाव के साथ प्रस्तुत हुए हैं। यही कारण है कि कृति में अतिरिक्त आकर्षण, पठनीयता और मूल्यवत्ता आ गयी है। अनेक स्थल ऐसे हैं जहाँ पहुँच कर पाठक खो जाता है और उस कुतूहलवर्धक तथा मनोमुग्धकारी प्रकरण से उसे सात्त्विक स्फूर्ति मिलती है। आधुनिक साहित्य-जगत की अहंकारग्रस्त उठापटक से ऊबे, अकुलाये और थके चित्त के लिए उक्त स्फूर्ति बहुत मूल्यवान सिद्ध होती है। हिन्दी भाषा के शिखर साहित्यकारों के बीच प्रसाद का जीवन अप्रतिम चमक संदीप्त तो है ही कुछ एकान्तिक मौन साधक की अभिजात रहस्यमयता से भी ओतप्रोत है। इसीलिए उनके अंतरंग जीवन के प्रति पाठकीय चित्त में अशेष जिज्ञासायें उठा करती हैं। इस कृति के सुधी सम्पादक श्री पुरुषोत्तमदास मोदी ने संस्मरणों के साथ मूल्यवान टिप्पणियों, पत्रों और चित्रों आदि से सुसज्जित कर इस कृति की उपयोगिता बढ़ा दी है। लेखन-साधना, मेधा, विद्वत्ता, आस्थावादिता और व्यक्तित्व-गरिमा के साथ इस साहित्यिक महानायक की शिक्षा-दीक्षा, स्नान-पूजा, ठण्डई-छानने, पहलवानी जैसी विशिष्ट रुचियों, कुल-मर्यादा, संघर्ष-यात्रा और जीवन की बहुआयामी पीड़ाओं आदि के संदर्भों पर प्रकाश डालने वाली कृति 'अंतरंग संस्मरणों में जयशंकर प्रसाद' वास्तव में एक अनूठी कृति है। **— विवेकी राय**

हाल में हिन्दी जगत् में संस्मरण की जिस विलक्षण पुस्तक की चर्चा रही है वह है—अंतरंग संस्मरणों में जयशंकर 'प्रसाद', सम्पादक : पुरुषोत्तमदास मोदी (प्रकाशक—विश्वविद्यालय प्रकाशन, चौक, वाराणसी-221001) छायावाद के शिखर कवि जयशंकर प्रसाद (1890-1937), को तो प्रेमचंद और आचार्य रामचंद्र शुक्ल से भी छोटी उम्र मिली, सिर्फ 47 वर्ष की अल्पायु में वे दिवंगत हो गए, बीमारी के दौरान उनके कई हितैषियों और लेखक बंधुओं ने कोशिश की कि वे इलाज के लिए भवाली सिनेटोरियम चलें, बल्कि कुँवर सुरेश सिंह ने उन्हें अल्मोड़ा ले चलने का प्रस्ताव भी किया, लेकिन प्रसादजी अपनी जिद पर अडिग रहे—लोग मरने के लिए काशी आते हैं मैं भवाली जाऊँ, उनकी जिद के आगे किसी की नहीं चली और 15 नवम्बर, 1937 की सुबह 4 बजे उनका प्राणांत हुआ।

प्रसादजी पर अब तक लिखे विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित उनके समकालीन लेखकों के अंतरंग संस्मरणों को एक जगह एकत्र करके और पुस्तक के रूप में प्रकाशित करके मोदी ने एक महत्वपूर्ण काम किया है। प्रेमचंद के निधन के अगले साल प्रसादजी का जाना हिन्दी साहित्य को उद्वेलित करने वाली घटना थी। प्रसादजी की अंतरंगता को गहराई से उठाते हुए डॉ० राजेन्द्रनारायण शर्मा ने लिखा है—''एक दिन मैंने उनसे पूछा, मनुष्य का सबसे बड़ा गुण क्या होता है ? उन्होंने कहा—कृतज्ञता और निकृष्ट गुण पूछने पर कहा—कृतघ्नता''।

इन संस्मरणों से प्रसादजी के व्यक्तित्व के अनेक अज्ञात मोहक पक्ष उभरते हैं। बाकी पत्रों से भी प्रसादजी की रचनाशीलता एवं उनकी साहित्य-चिंता पर प्रकाश पड़ता है। कहना न होगा कि प्रसादजी व्यक्तित्व एवं जीवन के विभिन्न पक्षों को जानने के लिए संस्मरण की यह एक विलक्षण पुस्तक है। **— 'हंस' में**
**भारत भारद्वाज**

## अभिव्यक्ति का नयापन

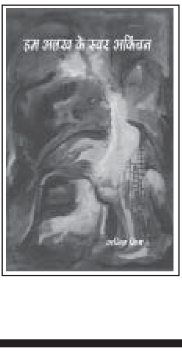

कविता के लिए अतिशय भावुकता ठीक नहीं मानी जाती। इस संग्रह में अभाव, संकट, शोषण, अन्याय, राष्ट्रप्रेम, सामयिक सजगता, रागात्मकता, नारी संवेदना, श्रम संस्कृति, ग्राम चेतना और भारतीय मन की अभिव्यक्ति का पुरजोर ढंग से हुई है। यह कवि की विशेषता तो है ही। अभिव्यक्ति का नयापन और गहराई तक संस्पर्श कविता की अर्थवत्ता को एक नया आयाम देता है। इन छोटी-बड़ी कविताओं से गुजरते हुए यथार्थ, जीवन की वास्तविकता बन जाता है, कागद की लेखी न रहकर आँखो देखी बन जाता है।

श्रम के महत्व और श्रमिक के प्रति सहानुभूतिपरक कविताएँ तथा मन के स्तर पर स्वतंत्रता और कुंठा रहित समाज सम्बन्धी कविताएँ इसलिए नहीं सशक्त और प्रभावशाली बन पड़ी हैं कि वे एक वर्ग विशेष की वकालत करती हैं बल्कि इसलिए अमिट छाप छोड़ती हैं कि ये मानव मात्र के लिए रचित हैं। ये कविताएँ कहीं-कहीं वेदना को भी स्वर देती दिखायी पड़ती हैं। कविता 'सूखे आँसू' इसकी गवाह है।

'आज आँसू सूख गये हैं। आँखें पथरा गयी हैं। तार-तार हैं सपने। न कोई पराया है न कोई अपने।' वस्तुतत्व की सार्थकता जीवन के वास्तविक यथार्थ में कवि की सूक्ष्म दृष्टि पर निर्भर करती है। रूप और वस्तु दोनों में से किसी एक की शिथिलता इस बात का संकेत प्रदान करती है कि कहीं न कहीं जीवंत यथार्थ और कवि के काव्य बोध के बीच अन्तराल है। ऐसी विसंगतियाँ काव्य संग्रह में कहीं झलक मार जाती हैं जिसमें भावों का सुथरापन और गहराई तो विद्यमान है पर कहीं-कहीं स्पष्टता का अभाव भी है। अनिल मिश्र का यह पहला काव्य संग्रह है। आगे की रचनाओं में इस दोष का परिष्कार हो सकेगा ऐसी उम्मीद है। कुल मिलाकर सामाजिक प्रतिबद्धता और जीवन मूल्यों से लबरेज यह संग्रह कवियों की लम्बी कतार में उनकी अलग पहचान दिलाता है। रचनाओं में किसी कलागत आग्रह के बगैर रचनाओं की निर्मित प्रक्रिया जारी है, जिसमें प्रतिघातों के बीच भी समाज की प्रवाहमान धारा के बीच मध्यवर्गीय जीवन अपनी इयत्ता सुरक्षित रखता है।

**— डॉ० उदयप्रताप सिंह**

हम अलख के स्वर अकिंचन
(कविता संग्रह)
लेखक : अनिल मिश्र
मूल्य : 90 रुपये

## लौटकर आना होगा

(अपने समय के साहित्यकारों, विचारकों और अध्यापकों के संस्मरण)

लेखक
**कान्तिकुमार जैन**

प्रकाशक : वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली
मूल्य : 125 रुपये

डॉ० रामचन्द्र तिवारी के अनुसार ''संस्मरण किसी स्पर्शभाग की स्मृति का शब्दांकन है। स्पर्शभाग के जीवन के वे पहलू, वे संदर्भ और वे प्रारम्भिक वैशिष्ट्य जो स्मरणकर्त्ता को स्मृत रह जाते हैं उन्हें वह शब्दोंकित करता है।''

कान्तिकुमार ने उपर्युक्त परिभाषा में संशोधन करते हुए कहते हैं ''मैंने संस्मृत व्यक्तियों के जीवन में व्याप्त मर्यादा के इस 'कैमाफ्लाज' का उद्घाटन

करने में संकोच नहीं किया है। मेरे लिए सत्य की मर्यादा से बड़ी कोई अन्य मर्यादा नहीं है और न ही जीवन के लिहाज़ से बढ़कर किसी अन्य का लिहाज़।'' मध्यप्रदेश के हरिशंकर परसाई का तेवर और शरद जोशी का प्रहार इन संस्मरणों में पग-पग पर व्यक्त होता है। पहला संस्मरण 'क्षतशीश किन्तु नतशीश नहीं' बच्चनजी पर एक स्मारक संस्मरण है। बच्चनजी को लोग उनकी जीवनी से ही जानते हैं किन्तु बच्चनजी की जो परख इस संस्मरण में है, वह अन्यत्र नहीं।

अन्य संस्मरणों में रामानुजलाल श्रीवास्तव, भवानीप्रसाद मिश्र, हरिशंकर परसाई, रजनीश, डॉ० रामप्रसाद त्रिपाठी, रामशंकर शुक्ल 'रसाल', कृष्णचन्दर, रामेश्वर शुक्ल 'अंचल', सुधा अमृत राय, पाण्डे बेचन शर्मा 'उग्र', सियारामशरण गुप्त, शानी, शरद जोशी, दुष्यंतकुमार और त्रिलोचन के हैं।

कुछ संस्मरण अत्यन्त आक्रामक शैली में है कुछ अत्यन्त आत्मीय तथा सुहृद शैली में। 'रजनीश' का संस्मरण क्या है पूरा जीवन चरित है। इसे पढ़कर 'ओशो' को याद करना मुश्किल होगा। व्यक्ति की दुर्बलताओं और उसकी उपलब्धियों का चित्रण करने में कान्तिकुमार ने कोई कसर नहीं छोड़ी है।

बकौल कान्तिकुमार ''परसाईजी यदि आधुनिक हिन्दी के बाबा-ए-व्यंग हैं तो शरद जोशी को चाचा ए व्यंग्य कहना ही होगा।'' एक कहावत है—चाचा चोर भतीजा पाजी, चाचा के सिर पर जूता बाजी। कान्तिकुमार अपने संस्मरणों में इस कहावत को चरितार्थ करने से नहीं चूकते। अंचल, रजनीश आदि के संस्मरण इसके नमूने हैं। मध्य प्रदेश के साहित्यकारों के ये संस्मरण अनूठे हैं, जो उनकी जीवंतता प्रगट करते हैं। लगभग सभी संस्मरणों में कान्तिकुमार प्रकाश और अन्धकार की आक्रामक शैली में वर्णन करते हैं।

अभी तक संस्मरणों में सपाट बयानी होती थी, इनमें सपाट बयानी नहीं व्यक्ति के अंतरंग और बहिरंग का विश्लेषणात्मक चित्रण है। मानव स्वभाव के विभिन्न रंग इनमें है। प्रात:स्मरणीय से सहसा अस्मरणीय हो जाते हैं। 'लौटकर आना नहीं होगा' ने संस्मरण की विधा को नई ऊर्जा तथा टेकनीक दी है। ये अद्‌भुत हैं।

## समाज-दर्शन की भूमिका

लेखक

**डॉ० जगदीशसहाय श्रीवास्तव**

पृ० 464 मूल्य : 150.00

'समाज-दर्शन की भूमिका' हिन्दी में मौलिक रूप से लिखी गयी अपने विषय की प्रथम कृति है। सरल तथा प्रवाहपूर्ण शैली में लेखक ने इस कृति में समाज-दर्शन की प्रमुख समस्याओं एवं महत्त्वपूर्ण प्रवृत्तियों का ऐतिहासिक, वैज्ञानिक तथा मूल्यात्मक विवेचन प्रस्तुत किया है। समाज, परिवार, राज्य, सम्पत्ति, न्याय, अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध, सभ्यता, संस्कृति, धर्म इत्यादि समस्याओं की वैज्ञानिक एवं निष्पक्ष व्याख्या इस पुस्तक में है। इसी प्रकार पूँजीवाद, समाजवाद, साम्यवाद, गाँधीवाद, एकात्म-मानववाद, व्यक्तिवाद, राष्ट्रवाद, अन्तर्राष्ट्रीयवाद, कट्टरवाद-उदारवाद, धार्मिक श्रेष्ठतावाद, धर्मनिरपेक्षतावाद, एक संस्कृतिवाद-बहुसंस्कृतिवाद इत्यादि विभिन्न सामाजिक विचारधाराओं का सम्यक्, निर्भीक एवं दार्शनिक विश्लेषण लेखक ने प्रस्तुत किया है। विद्वान् लेखक का विचार है कि दार्शनिकों का काम केवल चिन्तन और मनन करना नहीं है वरन् उन्हें सक्रिय रूप से व्यावहारिक जीवन में भी प्रवेश करना चाहिए। काल परिवर्तन के संसार में सामाजिक तथ्यों एवं सामाजिक विचारधाराओं में जो परिवर्तन हुए हैं उनकी सम्यक् अभिव्यक्ति का प्रयास है। सामाजिक एवं राजनीतिक समस्याओं के समाधान के लिए राजनीतिज्ञों पर आश्रित होना अविवेकपूर्ण कार्य होगा। इस प्रकार दर्शन-साहित्य में अपने ढंग की यह प्रथम मौलिक रचना है।

पुस्तक का मुख्य उद्देश्य भौतिकवादी विचारधारा का उच्छेदन एवं अध्यात्मवादी विचार-धारा का समर्थन करना है। जगत् अन्ध भौतिक परमाणुओं की सृष्टि न होकर एक चेतन सृष्टि है। जीवन संघर्ष के मूल में परस्परावलम्बन व परस्पर-परकता परिव्याप्त है। जीवन से घृणा, हिंसा, द्वेष इत्यादि अस्वस्थ एवं विघटनात्मक प्रवृत्तियों का निर्मूलन कर उनके स्थान पर प्रेम, अहिंसा, सहयोग इत्यादि स्वस्थ एवं सृजनात्मक प्रवृत्तियों के आधार पर 'दिव्य जीवन' के उच्चादर्शों की स्थापना ही पुस्तक का लक्ष्य है।

यह पुस्तक दर्शन, समाजशास्त्र तथा राजनीतिशास्त्र के आई०ए०एस०, पी०सी०एस०, बी०ए० तथा एम०ए० छात्रों तथा अध्यापकों के लिए विशेष रूप से उपयोगी है।

## पुरइन-पात

### भोजपुरी साहित्य से एक चयन

सम्पादक

**डॉ० अरुणेश नीरन व डॉ० चितरंजन मिश्र**

**दो सौ रुपये**

सन्त जब गाने लगते हैं तब भाषा अपनी सरहदें तोड़ देती है। भाषा में दार्शनिक बोलता है, सन्त बोली में गाता है। दार्शनिक से सन्त महान होता है, क्योंकि तर्क के प्रभाव से दर्शन ऊपर की ओर बढ़ता है जबकि सन्तों की बानी लहर की तरह फैल कर ढाई आखर वाले प्रेम को अपने अँकवार में भर लेती है। इसलिए सारे दार्शनिक शहरों में हुए और सारे सन्त गाँवों में, वनों में। भोजपुरी में सन्त काव्य की महान परम्परा रही है। उत्तर भारत की सन्त-परम्परा भोजपुरी की परम्परा है।

भोजपुरी के लोक-काव्य की परम्परा अत्यन्त समृद्ध है। इसमें लोक-जीवन के उल्लास, उछाह, हूक, हुलास, संस्कृति, बोध, प्रेम, विरह, विद्रोह, यथार्थ, संघर्ष आदि की मार्मिक व्यंजना मिलती है।

गद्य विधाओं में कहानी-साहित्य भोजपुरी में अत्यन्त उन्नत और महत्त्वपूर्ण है।

विद्यानिवास मिश्र, शिवप्रसाद सिंह, विवेकी राय, गणेशदत्त किरण, आनन्द सन्धिदूत, अशोक द्विवेदी की रम्य रचनाएँ; रसिक बिहारी ओक्षा 'निर्भीक', चन्द्रभाल द्विवेदी और सरदार देविन्दर पाल सिंह के **यात्रा संस्मरण**; रामनाथ पाण्डेय, रामदेव शुक्ल और पाण्डेय कपिल के **उपन्यास**; माधुरी शुक्ल की **कहानी** और राहुल सांकृत्यायन, भिखारी ठाकुर के **नाटकों** ने भोजपुरी गद्य की परम्परा को समृद्ध किया है।

भोजपुरी की श्रेष्ठ गद्य-पद्य रचनाओं के एक प्रतिनिधि संकलन की आवश्यकता बहुत दिनों से महसूस की जा रही थी। यह संकलन उसी दिशा में एक विनम्र प्रयास है।

## प्राचीन भारतीय कला एवं वास्तु

**डॉ० पृथ्वीकुमार अग्रवाल**

प्रोफेसर

प्राचीन भारतीय इतिहास, संस्कृति तथा पुरातत्त्व

काशी हिन्दू विश्वविद्यालय

**सजिल्द : 650** **पेपरबैक : 450**

प्राचीन भारतीय कला
वास्तु

कला के विकास की भारतीय परम्परा का इतिहास अति प्राचीन है। ताम्रप्रस्तर-युगीन सैन्धव सभ्यता से लेकर ऐतिहासिक संस्कृति के कालक्रम में इस देश की कलाधारा अपने अजस्र प्रवहमान स्वरूप की साक्षी है। वैदिककालीन साहित्य में प्रतिबिम्बित कलात्मक विचारों तथा क्रिया-कलापों के लिए पुरातात्त्विक प्रमाणों का अभी अभाव है। तो भी, उसी परम्परा का आगामी प्रस्फुटन शैशुनाग-नन्द, मौर्य, शुंग, आन्ध्र-सातवाहन, शक-कुषाण, गुप्त आदि राजवंशों के युगों के भवन-निर्माणों, स्मारकों एवं कलाओं के बहुमुखी उन्नयन में देखा जाता है। इन सभी कालखण्डों के लिए प्राप्त सामग्री अत्यन्त विस्तृत तथा व्यापक है। प्रस्तर-शिल्प, मृन्मय शिल्प, धातु-शिल्प, चित्रकला, अलंकरण-आभूषण, मणि-शिल्प, दंत-शिल्प, काष्ठ-शिल्प आदि की विविध शैलियों के अध्ययन के लिए साक्ष्यों का न केवल साहित्यिक प्रत्युत पुरातात्त्विक संभार भी बहुमुखी और बहुमूल्य है। संस्कृति के विविध पक्षों में भौतिक स्तर पर हुई उपलब्धियों और तत्सम्बन्धी आदर्शों की समकालिक अभिव्यक्ति जानने-परखने के लिए कला अप्रतिम साधन है।

सौन्दर्य-शास्त्र एवं शिल्प-विधाओं की दृष्टि से भारतीय कला के क्रमिक विकास-चरणों का सविशेष अध्ययन अब अत्यन्त रोचक विशेषज्ञ-शास्त्र बन चुका। विद्यालयों एवं विश्व-विद्यालयों की उच्चस्तरीय शिक्षा-पद्धति में आज उसका पठन-पाठन सर्वत्र प्रचलित विषय है। हिन्दी माध्यम में इस विषय की समुचित पाठ्य-पुस्तकों का प्राय: अभाव-सा रहा है। उसी आवश्यकता की विशेष पूर्ति के लिए प्रस्तुत पुस्तक तैयार की गई है जिसमें विषय-वस्तु का सविस्तार एवं शास्त्रीय अध्ययन विद्वान् लेखक द्वारा किया गया है। प्राचीन भारतीय कला एवं वास्तु के सभी महत्त्वपूर्ण पक्षों का यहाँ ब्योरेवार लेखा-जोखा है। साथ में दिए गए साढ़े ग्यारह सौ रेखांकन तथा 24 फलकों में प्रस्तुत 65 छविचित्र उन-उन युगों की वस्तुत: प्रत्येक अपेक्षित वास्तु-रचना और शिल्पकृति से अध्येताओं तथा विद्यार्थियों का सीधे परिचय कराते हैं। इस प्रकार यह अपने विषय का न केवल विस्तार-पूर्वक विवेचन करने वाला स्रोत ग्रन्थ है प्रत्युत प्राचीन भारतीय कला-वस्तुओं का चित्रात्मक आकर-कोष है।

## भारतीय संग्रहालय एवं जनसम्पर्क

### डॉ० आर० गणेशन्

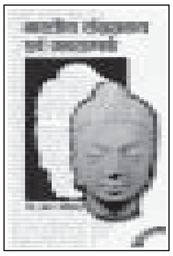

भारत कला भवन
काशी हिन्दू विश्वविद्यालय

**सजिल्द : 400 पेपरबैक : 250**

आदिकाल से ही भारतीय जनमानस 'सत्यम् शिवम् सुन्दरम्' की अवधारणा से ओतप्रोत रहा है, जो भारतीय संस्कृति का मूल आधार है। इसी अवधारणा से प्रेरित होकर पूर्वज संस्कार सम्पन्न अतिश्रेष्ठ मानवों ने अपनी सृजनात्मक क्षमता एवं कला-कौशल द्वारा संस्कृति के बहुआयामी पक्षों को समृद्ध किया है जिनके अवशेष स्वरूप वास्तविक मूर्त वस्तुयें आज भी जनसामान्य की प्रेरणा स्रोत बनकर विविध सांस्कृतिक आगारों, संग्रहालयों में संरक्षित हैं। इन संग्रहों के सारगर्भित ज्ञान से समुदाय को शिक्षित, जागरूक बनाने की दिशा में भारत में अब तक कोई सार्थक प्रयत्न नहीं हुआ है। यही कारण है कि भारत की बहुसंख्यक जनता इन सांस्कृतिक तत्त्वों का लाभ पाने में असमर्थ है।

आज की तकनीकी एवम् औद्योगिक विकास में हो रही तीव्रगामी प्रगति; जिसे आधुनिक विकास प्रक्रिया का अभिन्न अंग माना जा रहा है, के फलस्वरूप भारत की सांस्कृतिक परम्पराओं का विखण्डन भी साथ ही साथ होना प्रारम्भ हो चुका है। आज हमारा समाज संस्कृति विहीन विकास की ओर उन्मुख होता जा रहा है। ऐसी दुरावस्था में देश के विविध संग्रहालय एवं सांस्कृतिक आगार ही कला एवं संस्कृति का सम्बन्ध लोक से करा सकेंगे। जीवन को उससे ओत-प्रोत कर सकेंगे। उन्नत परिदृश्य में यह दुरूह कार्य एक सुनियोजित प्रचार एवं जनसम्पर्कीय विधा द्वारा ही सम्भाव्य है। इसी दृष्टिकोण से डॉ० गणेशन् द्वारा लिखित भारतीय संग्रहालय एवं जनसम्पर्क पुस्तक की अभिप्रायपूर्ण प्रासंगिकता है जिसमें विविध स्रोतों से प्राप्त एकत्रित सामग्रियों, प्रमाणों का सूक्ष्मता से विश्लेषण कर दिया गया यथोचित निर्देश, प्रस्ताव एवं सुझाव है जो इनके व्यक्तिगत अनुसन्धान का परिणाम है।

विगत कई वर्षों से एक ऐसी पुस्तक की नितान्त आवश्यकता अनुभव की जा रही थी जो भारतीय समाज के सर्वांगीण विकास के अनुरूप संग्रहालयों की नीति एवं कार्यक्रमों में परिवर्तन कर कुशलता से व्याख्या करने एवम् उनकी उपयोगिता का प्रतिपादन करने में उपयोगी हो सके। प्रस्तुत पुस्तक का प्रणयन इसी आशा और विश्वास के साथ लेखक ने किया है जो लम्बे समय तक भारतीय संग्रहालयविदों, संग्रहालय शुभेच्छुओं को, उत्पन्न नयी चुनौतियों का सामना करने हेतु समयोचित मार्गदर्शन करने में सहायक सिद्ध होंगे।

## प्राचीन भारतीय कला में मांगलिक प्रतीक

### डॉ० विमलमोहिनी श्रीवास्तव

**200.00**

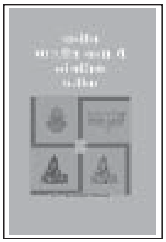

आदिकाल से ही मानव ने समय-समय पर अपने को अभिव्यक्त करने के लिए प्रतीकों का सहारा लिया है। आदिमानव भी अपनी गतिविधियों की अभिव्यक्ति प्रतीकों के माध्यम से करता था जिसके प्रमाण कंदराओं के भित्ति चित्रों में उपलब्ध हैं।

प्राचीन भारतीय कला धर्म से अनुप्राणित हैं अत: धर्म की पृष्ठभूमि में कतिपय प्रतीकों की गवेषणात्मक विवेचना प्राचीन काल के कुछ प्रमुख प्रतीकों जैसे लक्ष्मी, पूर्ण कलश, स्वस्तिक, कमल एवं गंगा-यमुना का समावेश इस पुस्तक में है; जिनके सामाजिक महत्व, उपयोगिता, सांस्कृतिक एकता, गतिशीलता एवं विकास के रूपांतर हम प्रतीकों के माध्यम से शिलालेखों पर उत्कीर्ण पाते हैं।

कलश की स्थापना, स्वस्तिक, यंत्र की संरचना आदि के पश्चात देवताओं का आवाहन, समस्त परिवारजनों, ग्रामवासियों को आमंत्रण आदि सांस्कृतिक एवं सामाजिक एकता को दर्शाता है। इतिहास की नींव पर ही वर्तमान के भव्य भवन का निर्माण सम्भव है। बिना सुसंस्कृत आधार के उज्जवल भविष्य की कामना असंभव है।

आज के विज्ञान युग में इन प्रतीकों का ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में अध्ययन, निश्चित रूप से आनेवाली पीढ़ी को दिशा देगा और अपनी सांस्कृतिक धरोहर के प्रति अभिरुचि उत्पन्न करेगा-ऐसी अपेक्षा है। यह पुस्तक प्राचीन इतिहास एवं कला के जिज्ञासुओं के लिये भी उपयोगी है।

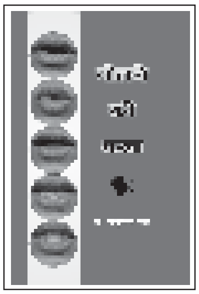

## बोलने की कला

### डॉ० भानुशंकर मेहता

**दो सौ पचास रुपये**

रंगमंच पर अभिनय करने, सभा सोसायटी का राजनीतिक मंच पर भाषण करने, कक्षा में छात्रों को पढ़ाने के लिए ठीक से अपने आपको अभिव्यक्त करने के लिए बोलने की कला जानना अत्यावश्यक है। सामान्य जीवन से भी शिष्ट व्यवहार और मधुर बातचीत के लिये भी यह कला उपयोगी सिद्ध होगी। अभिनय, भाषण या बातचीत स्मृति और बुद्धि के सहारे चलते हैं तो बहुधा आपको आलेख या निबन्ध, मंच या रेडिया पर पढ़ना भी होता है, वहाँ भी बोलने की कला काम आती है।

बोलने की कला शुद्ध उच्चारण या सही व्याकरण सम्मत भाषा मात्र नहीं है उसमें उतार-चढ़ाव, बल, भावाभिव्यंजना, काकु प्रयोग, विश्राम के साथ खड़े होने का कायदा, हाथ और मुख की मुद्रा का रहस्य भी जानना होता है।

बोलने की कला सीखकर व्यक्ति कुशल अभिनेता या भाषणकर्त्ता ही नहीं, उत्तम स्वास्थ्य और दीर्घायुष्य की कुंजी भी प्राप्त कर लेता है।

यह लघु पुस्तक वाक्सिद्धि का अमोघ मंत्र प्रदान करती है।

---

## आपका पत्र

'भारतीय वाङ्मय' पत्रिका का प्रत्येक अंक साहित्येतिहास की आधारभूत सामग्री से संवलित होता है, इसलिए वह संग्रहणीय और पठनीय होता है। 'भारतीय वाङ्मय' साहित्येतिहास-लेखकों के साथ उपकार्य-उपकारक भाव से जुड़ा हुआ है। अस्तु;

विगत अंक के 'स्मृति-शेष' स्तम्भ में आपके द्वारा उपन्यस्त संस्कृत वाङ्मय के शलाकापुरुष प्रो० विश्वनाथ वेंकटाचलम् के परिचय में उनके लोकान्तरण का समाचार पढ़कर मैं हतप्रभ रह गया। पुण्यश्लोक वेंकटाचलम्जी का सारस्वत सान्निध्य मुझे सन् 1990 ई० में सुलभ हुआ था, जब वह 'भोगीलाल लहेरचन्द इंस्टीट्यूट ऑफ इण्डोलॉजी' के निदेशक पद पर प्रतिष्ठित थे। उसी अवधि में उन्होंने 'इंस्टीट्यूट' की ओर से राष्ट्रीय जैन विद्वत्संगोष्ठी का आयोजन किया था, जिसमें प्रो० बी०के० मतिलाल (अब लोकान्तरित) जैसे अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति के शोध मनीषी सम्मिलित हुए थे।

ज्ञातव्य है, उस विद्वत्संगोष्ठी में मैंने भी 'जैनधर्म-दर्शन : तात्त्विक एवं सैद्धान्तिक परिशीलन' विषय पर अपना शोधपत्र प्रस्तुत किया था और उस सत्र की अध्यक्षता प्रो० मतिलाल ने ही की थी। मैं अतिशय गौरवान्वित हुआ, जब इन्होंने मेरे, पत्र-वाचन के बाद, शोध-पत्र को 'वेरी नाइस' कहा था।

उसी क्रम में पुण्यश्लोक वेंकटाचलम् के वैदुष्य-विदग्ध सत्संग का सुखद दुर्लभ अवसर मेरे

लिए अलभ्यलाभ जैसा प्रतीत हुआ था। वह न केवल भारतीय विद्वत् परम्परा, अपितु आर्य परम्परा का भी प्रतिनिधित्व करते थे। उनके जैसा ऋतम्भरा प्रज्ञा से विभूषित विद्वान् की द्वितयता नहीं रह गई है। उनके जैसा शास्त्रपूत एवं प्रतिष्ठित प्रज्ञा वाले अक्षर पुरुष 'न भूतो, न भविष्यति'।

— **डॉ० श्रीरंजन सूरिदेव,** पटना

## भोजपुरी लोक साहित्य

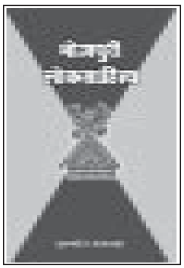

**डॉ० कृष्णदेव उपाध्याय**

**चार सौ रुपये**

भोजपुरी भाषा, भोजपुरी लोकगीत, भोजपुरी लोकगाथा, भोजपुरी लोक-कथा तथा भोजपुरी प्रकीर्ण साहित्य पर शोधपरक ग्रन्थ।

भोजपुरी भाषा, भाषा का क्षेत्र, विस्तार, विभिन्न बोलियाँ, व्याकरण। विस्मृति के गर्भ में पड़े अनेक भोजपुरी रचनाकारों की कृतियों का अध्ययन और विस्तृत विवेचन। लोकगीतों की भारतीय परम्परा—वैदिक काल से लेकर अब तक। लोकगीतों का वर्गीकरण। भोजपुरी लोक-संस्कृति एवं प्रथाओं के चित्र। लोकगीतों में भारतीय संस्कृति का प्रवाह—भोजपुरी, मैथिली, गुजराती, बंगला आदि भाषाओं में।

लोककथाओं की उत्पत्ति, प्रकार और विशेषताएँ। लोक-कथाओं की भारतीय परम्परा वैदिक आख्यानों से लेकर लोक-कथाओं का अविरल प्रवाह। लोक-कथाओं का वर्गीकरण, लोक-कथाओं की शैली।

प्रकीर्ण साहित्य के अन्तर्गत भोजपुरी लोकोक्तियाँ, मुहावरे, पहेलियाँ और विविध प्रकार की सूक्तियाँ, सामाजिक प्रथाएँ।

लोकसाहित्य के सभी अंगों का विस्तृत अध्ययन तथा समीक्षा। भोजपुरी लोक साहित्य का ज्ञानकोश।

---

# पत्र-पत्रिकाएँ

### अहिन्दी भाषी क्षेत्र तथा हिन्दी संस्थाओं के प्रमुख पत्र

**आंतर भारती**
सम्पादक : गंगाधर घुमाडे
सम्पर्क : 430, शनिवार पठे, पुणे

**भारतवाणी** (मासिक)
सम्पादक : चंदूलाल दुबे
सम्पर्क : दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा
कर्नाटक शाखा, पो०बा० नं० 42
डी०सी० कम्पाउण्ड, धारवाड़-580 001

**मैसूर हिन्दी प्रचार परिषद पत्रिका** (मासिक)
सम्पादक : मनोहर भारती
सम्पर्क : मैसूर हिन्दी प्रचार परिषद्
58, वेस्ट ऑफ कार्ड रोड, राजीव नगर
बेंगलूर-560010

**केरल हिन्दी साहित्य अकादमी शोध पत्रिका**
(त्रैमामासिक)
सम्पादक : डॉ० एन० चन्द्रशेखरन नायर
सम्पर्क : श्री निकेतन, लक्ष्मीनगर
पट्टम पालम पोस्ट
तिरुवनन्तपुरम्-695 004

**विवरण पत्रिका** (मासिक)
सम्पादक : श्री घोण्डीराव जाधव
सम्पर्क : हिन्दी प्रचार सभा,
नामयपल्ली, स्टेशन रोड
हैदराबाद-500 001

**हिन्दी विद्यापीठ पत्रिका** (त्रैमासिक)
सम्पादक : नरसिंह पंडित
सम्पर्क : हिन्दी विद्यापीठ
देवधर (झारखण्ड)

**साहित्य संहिता** (त्रैमासिक)
सम्पादक : डॉ० रजनीकान्त जोशी
सम्पर्क : अमृता प्रकाशन
सी/5, 'ओजस'
अहमदाबाद-380 015

**समाज प्रवाह** (मासिक)
सम्पादक : मधु श्री० काबरा
सम्पर्क : गणेश बाग, जवाहरलाल नेहरू रोड
मुलुंड (प०), मुंबई-400 080

**राष्ट्रभाषा** (मासिक)
प्रा० अनन्तराम त्रिपाठी
सम्पर्क : राष्ट्रभाषा प्रचार समिति
वर्धा

---

**भारतीय वाङ्मय**
**मासिक**
**वर्ष : 3** **अगस्त 2002** **अंक : 8**

*प्रधान सम्पादक*
**पुरुषोत्तमदास मोदी**

*सम्पादक*
**परागकुमार मोदी**

वार्षिक शुल्क
रु० 30.00

विश्वविद्यालय प्रकाशन
वाराणसी
*के लिए*
**अनुरागकुमार मोदी**
*द्वारा प्रकाशित*
वाराणसी एलेक्ट्रॉनिक कलर प्रिन्टर्स प्रा० लि०
वाराणसी
*द्वारा मुद्रित*

प्रेस रजिस्ट्रेशन एक्ट 1807 ई० धारा 5 के अन्तर्गत
Licenced to post without prepayment at
G.P.O. Varanasi
Licence No. LWP-VSI-01/2001

**रजिस्टर्ड नं० ए डी-174/2002**

सेवा में,

प्रेषक : (If undelivered please return to :)

**विश्वविद्यालय प्रकाशन**
**प्रमुख प्रकाशक एवं पुस्तक विक्रेता**
***( विविध विषयों की हिन्दी, संस्कृत तथा अंग्रेजी पुस्तकों का विशाल संग्रह )***
विशालाक्षी भवन, पो०बाक्स 1149
चौक, वाराणसी-221 001 (उ०प्र०) (भारत)

**VISHWAVIDYALAYA PRAKASHAN**
*Premier Publisher & Bookseller*
**(BOOKS IN HINDI, SANSKRIT & ENGLISH FOR STUDENTS, SCHOLARS, ACADEMICIANS & LIBRARIAN)**
Vishalakshi Building, P.O. Box : 1149
Chowk, VARANASI-221 001(U.P.) (INDIA)

☎ : (0542) 353741, 353082 ● **Fax :** (0542) 353082 ● **E-mail :** vvp@vsnl.com ● vvp@ndb.vsnl.net.in